[2020] 4 एस.सी.आर. 513

डी.बी. बेसनेट (डी) विधिक प्रतिनिधि द्वारा

बनाम

कलेक्टर एवं अन्य पूर्वी जिला, गंगटोक,

सिकिम एवं अन्य

(सिविल अपील संख्या 196/2011)

02 मार्च, 2020

[न्यायमूर्ति संजय किशन कौल और न्यायमूर्ति के.एम. जोसेफ]

सिक्किम भूमि (अधिग्रहण और अधिग्रहण) अधिनियम, 1977 - प्रत्यर्थी संख्या. 2 - राज्य ने वर्ष 1980 में भूमि अधिग्रहण करने की मांग की - अपीलार्थी ने दलील दी कि उक्त भूमि का अधिग्रहण कानून के अनुसार नहीं किया गया था - प्रत्यर्थी नं. 2 ने यह प्रतिवाद किया कि कृषि विभाग ने भूमि का अधिग्रहण करते समय उचित प्रक्रिया का पालन किया था और मूल अपीलार्थी के पिता को Rs.62,645/- का मुआवजा दिया था - निचली अदालत ने मुकदमा खारिज कर दिया - उच्च न्यायालय में दायर अपील को भी खारिज कर दिया गया था - अपील पर अभिनिर्धारित किया गया : प्रत्यर्थी-राज्य ने धारा 4 या किसी अन्य घोषणा के तहत भूमि अधिग्रहण के इरादे की कोई अधिसूचना प्रस्तुत नहीं की है - अधिग्रहण प्रक्रिया के संबंध में कोई रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं है - प्रत्यर्थी-राज्य ने केवल अधिग्रहण के लिए मूल अपीलार्थी के पिता से प्राप्त सहमति और भुगतान किए गए मुआवजे पर भरोसा किया है - मुआवजे के पहलू पर, केवल एक आवरण पत्र उपलब्ध है न कि वास्तविक रसीद - इसके अलावा, मुआवजे और मुआवजे के भुगतान के लिए खाते से निकाली गई राशि का कोई प्रमाण नहीं है - जैसा कि उक्त अधिनियम की धारा 3(1), 4(2), 5(1) और 7(2) के तहत परिकल्पित है, उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना अधिग्रहण का अनुमान नहीं लगाया जा सकता - राज्य पर यह साबित करने का बोझ था कि उक्त अधिनियम के तहत परिकल्पित प्रक्रिया का पालन किया गया और मुआवजे का भुगतान किया गया - प्राथमिक और द्वितीयक दोनों साक्ष्यों का अभाव है - प्रत्यर्थीयो यह स्थापित करने में विफल रहे हैं कि उन्होंने कानून के अनुसार भूमि का अधिग्रहण किया था और मुआवजे का भुगतान किया था - इस प्रकार, अपीलार्थी भूमि के कब्जे का हकदार होगा और साथ ही प्रत्यर्थीयो द्वारा कम से कम तीन वर्ष की अवधि के लिए नोटिस दिए जाने से पहले उसके कानूनी उपयोग और कब्जे के लिए नुकसान का भी हकदार होगा - तथापि, प्रत्यर्थी राज्य को इस निर्णय के परिणाम का विश्लेषण करने के लिए कुछ समय (तीन माह) दिया गया था और यदि वे ऐसा चाहते हैं तो उक्त अधिनियम के अधीन उचित अधिसूचना के माध्यम से भूमि का अधिग्रहण करने के लिए और विधि में उचित सहारा लेने के लिए ताकि वे भूमि को अपने पास रख सकें - भारतीय संविधान - अनुच्छेद 300-क।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित *:* **1**. सवाल यह है कि क्या अधिग्रहण की प्रक्रिया का पालन कानून के अनुसार किया गया था। इस न्यायालय को सिक्किम भूमि (अधिग्रहण और अधिग्रहण) अधिनियम, **1977** की धारा **4** या उसके बाद किसी अन्य घोषणा के तहत भूमि अधिग्रहण के इरादे की कोई अधिसूचना नहीं दिखाई गई है। वास्तव में इस न्यायालय और नीचे की अदालतों के समक्ष जो दावा किया गया है, वह यह है कि अधिग्रहण प्रक्रिया के संबंध में कोई अभिलेख उपलब्ध नहीं हैं। यह स्पष्ट रूप से प्रत्यर्थी राज्य को एक कठिन स्थिति में डालता है, जिसे केवल अधिग्रहण के लिए प्राप्त सहमति और मुआवजे के भुगतान पर भरोसा करके समाप्त करने की मांग की गई थी, जैसा कि निर्धारित किया गया था। मुआवजे के पहलू पर, केवल एक आवरण पत्र उपलब्ध है, न कि वास्तविक रसीद। इस न्यायालय ने यह भी कहा है कि नकद में भुगतान करने की एक असामान्य प्रक्रिया को अपनाने का दावा किया गया है, और यदि अधिग्रहण के वर्ष को देखा जाए तो यह राशि मामूली राशि नहीं है। इस न्यायालय ने अधिकारियों को यह दिखाने का एक और अवसर भी दिया कि किस खाते से कलेक्टर द्वारा यह मुआवजा वापस लिया गया था, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि राशि वापस लेने का भी कोई सबूत नहीं है, मुआवजे का भुगतान बहुत कम है। मूल अपीलार्थी के पिता का दिनांक **20.3.1980** का पत्र निस्संदेह भूमि अधिग्रहण के लिए अनापत्ति है, लेकिन बशर्ते कि मुआवजे का भुगतान बाद में किया गया हो। यह पत्र उक्त अधिनियम के तहत भूमि अधिग्रहण या मुआवजे के निर्धारण के लिए प्रक्रिया का प्रमाण प्रस्तुत करने की आवश्यकता को दूर नहीं करता है। उक्त अधिनियम की धारा **3(1), 4(2), 5(1),** और **7(2)** के तहत परिकल्पित उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना अधिग्रहण का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। यह साबित करने का भार राज्य पर था कि उक्त अधिनियम के तहत परिकल्पित प्रक्रिया का पालन किया गया और मुआवजे का भुगतान किया गया। इनमें से किसी भी पहलू के समर्थन में साक्ष्य का एक टुकड़ा भी नहीं रखा गया है, सिवाय मूल अपीलार्थी के पिता की मुआवजे के भुगतान पर भूमि अधिग्रहण करने की अनुमति देने की इच्छा, भूमि राजस्व विभाग द्वारा राशि को एक चेक के माध्यम से जिला कलेक्टर को अग्रेषित करना, और उसके बाद कलेक्टर/प्रत्यर्थी संख्या **1** से एक पत्र जिसमें कहा गया है कि कुछ रसीद संलग्न की जा रही थी, नकद में भुगतान को स्वीकार करते हुए (बिना रसीद मिले)। इस प्रकार, प्राथमिक और द्वितीयक साक्ष्य दोनों का अभाव है। [अनुच्छेद **13**]

2. भले ही भूमि में अधिकार अब एक मौलिक अधिकार नहीं है**,** फिर भी यह भारत के संविधान के अनुच्छेद **300** क के तहत एक संवैधानिक अधिकार बना हुआ है**,** और किसी भी व्यक्ति को संपत्ति के अधिकारों से वंचित करने की मांग करने वाले किसी भी अधिनियम के प्रावधानों का सख्ती से पालन किया जाना चाहिए। **[अनुच्छेद 14]**

3. यह भी निश्चित विधि है कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम**, 1894** की धारा **4(1)** की प्रक्रिया का अनुसरण करना **(**उक्त अधिनियम की धारा **5(1)** के समान**)** अनिवार्य है और जब तक कि वह सूचना उसमें निहित प्रावधानों के अनुसार नहीं दी जाती है**,** तब तक पूरी अधिग्रहण कार्यवाही दूषित हो जाएगी। इस तरह के गैर-अनुपालन के आधार पर परिसर में प्रवेश के परिणामस्वरूप प्रवेश गैरकानूनी होगा। कानून का चरित्र अनुचित होने के कारण इसका सख्ती से पालन किया जाना आवश्यक है। नोटिस का उद्देश्य भूमि अधिग्रहण के इरादे के बारे में इच्छुक व्यक्तियों को सूचित करना है। इस प्रकार**,** जैसा कि वे पढ़ते हैं**,** उक्त अधिनियम के इन प्रावधानों का भी पालन किया जाना आवश्यक है। **[अनुच्छेद 15]**

4. उपर्युक्त का परिणाम यह होगा कि प्रत्यर्थीयो यह स्थापित करने में विफल रहे हैं कि उन्होंने कानून के अनुसार भूमि का अधिग्रहण किया था और उचित मुआवजे का भुगतान किया था। इस प्रकार, अपीलार्थी भूमि के कब्जे का हकदार होगा और साथ ही प्रत्यर्थीयो द्वारा उसके अवैध उपयोग और कब्जे के लिए कम से कम तीन (3) वर्ष की अवधि के लिए, नोटिस दिए जाने से पहले के लिए नुकसान का भी हकदार होगा। इस न्यायालय को *भूमि अधिग्रहण अधिकारी बनाम एम. रामकृष्ण रेड्डी* में इस न्यायालय के निर्णय के कारण अपनी टिप्पणियों में मजबूत किया गया है, जहां यह अभिनिर्धारित किया गया था कि स्वामी भूमि के गलत उपयोग और कब्जे के लिए हर्जाने का हकदार हो सकता है, जिसके संबंध में भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 के तहत कोई अधिसूचना जारी नहीं की गई है, कब्जे की तारीख से ऐसी अधिसूचना अंतिम रूप से प्रकाशित होने की तारीख तक। [अनुच्छेद 19]

5 हालांकि, यह न्यायालय प्रत्यर्थी-राज्य को इस निर्णय के परिणामों का विश्लेषण करने के लिए कुछ समय देना चाहता है, और यदि वे ऐसा चाहते हैं तो उक्त अधिनियम के तहत एक उचित अधिसूचना के माध्यम से भूमि का अधिग्रहण करने के लिए, और कानून में उचित उपाय करने के लिए ताकि वे भूमि रखने में सक्षम हो सकें। यह न्यायालय प्रत्यर्थी-राज्य को निर्णय की तारीख से तीन (3) महीने का समय देता है ताकि वे अपना मन बना सकें कि वे क्या करना चाहते हैं। क्या वे अभी भी एक उचित अधिसूचना जारी करके भूमि को बनाए रखना चाहेंगे, या वे भूमि का कब्जा सौंपना चाहेंगे। किसी भी स्थिति में, उपयोग और व्यवसाय के लिए भुगतान का सवाल अभी भी उत्पन्न होगा, जिसे कानून के अनुसार निर्धारित करना होगा। प्रत्येक लाभ का निर्धारण न्यायालय आयुक्त द्वारा किया जाएगा, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा नियुक्त किया जाएगा, क्योंकि उस ओर से वाद में ही राहत मांगी गई है। [अनुच्छेद 20]

विद्या देवी बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य **(निर्णय दिनांक 08.01.2020 सिविल अपील संख्या 60-61/2020 भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तय किया गया) - पर भरोसा किया गया।**

एन. पद्मम्मा एवं अन्य बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी और अन्य **(2008) 15 एससीसी 517;** नरिंदरजीत सिंह और रणजीत सिंह एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, आदि **(1973) 1 एससीसी 157;** लाओ बनाम एम. रामकृष्ण रेड्डी **(2011) 11 एससीसी 648 - संदर्भित किया गया ।**

<u>निर्णय विधि संदर्भ</u>

[2008] 9 एससीआर 535	**संदर्भित किया गया।**	**अनुच्छेद 14**
[1973] 2 एससीआर 698	**संदर्भित किया गया।**	**अनुच्छेद 15**
(2011) 11 एससीसी 648	**को संदर्भित किया गया।**	**अनुच्छेद 19**

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार : सिविल अपील संख्या 196/2011 ।

नियमित प्रथम अपील संख्या 2/2007 में सिक्किम उच्च न्यायालय के दिनांक 29.05.2008 के निर्णय और आदेश से।

ए.के. उपाध्याय, सीनियर अधिवक्ता, मनीष गोस्वामी और रामेश्वर प्रसाद गोयल, अपीलार्थी के लिए अधिवक्ता ।

राघवेंद्र कुमार, आनंद कुमार दुबे और नरेंद्र कुमार, प्रत्यर्थि के लिए अधिवक्ता ।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

संजय किशन कौल, न्यायमूर्ति

1. सिक्किम सरकार के कृषि विभाग (प्रत्यर्थी संख्या. 2) ने 1980 में पूर्वी सिक्किम में सांग के डुंडुंग ब्लॉक में स्थित 8.36 एकड़ भूमि का अधिग्रहण करने की मांग की थी। यह जमीन दो नामों में दर्ज की गई थी- सिक्किम के महाराजा के नाम पर 1.29 एकड़ और मूल अपीलार्थी के पिता मान बहादुर बासनेट के नाम पर 7.07 एकड़। बाद की भूमि वर्तमान कार्यवाही में विवाद का विषय है।

2. विचाराधीन भूमि पर आंशिक रूप से बाड़ लगाई गई है, जिसमें एक खेत, कुछ बैरक और कार्यालय हैं। स्वर्गीय मान बहादुर बासनेट का वर्ष 1991 में निधन हो गया जिसके बाद वर्तमान कार्यवाही में संपत्ति अपीलार्थी के हिस्से में आ गई (अब उनके दो बेटे प्रतिनिधित्व करते हैं) । यह देखा जा सकता है कि मान बहादुर बासनेट के सात (7) बच्चे बचे थे, लेकिन डी.बी. बेसनेट के वाद संपत्ति पर दावे के संबंध में भाई-बहनों के बीच कोई विवाद नहीं है।

3. यह दिवंगत अपीलार्थी का मामला है कि जब उसने मार्च, 2002 में वाद संपत्ति का दौरा किया, तो उसने पाया कि प्रत्यर्थियों ने गलत तरीके से अतिक्रमण किया था और उसी पर अतिक्रमण किया था, जिसका उपयोग कृषि फार्म के रूप में किया गया था। वह पहले गंगटोक से दूर रहने का दावा करता है और इस प्रकार, 05.04.2002 को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 80 के तहत एक नोटिस दिया गया, जिसमें उन्हें कथित अतिचार के खिलाफ अधिसूचित किया गया और कब्जा करने की मांग की गई। उसी पर कोई प्रतिक्रिया नहीं थी और इस प्रकार, मुकदमा जिला न्यायाधीश (ई एंड एन) गंगटोक, सिक्किम के न्यायालय के समक्ष दायर किया गया था, जो 0**9.12.2002** को शीर्षक मुकदमा संख्या **6/2004** (पुनः क्रमांकित) था।

4. किए गए दावे का सार और सार यह था कि सिक्किम भूमि (अधिग्रहण और अधिग्रहण) अधिनियम, 1977 (इसके बाद 'उक्त अधिनियम' के रूप में संदर्भित) के तहत परिकल्पित प्रक्रिया को लागू नहीं किया गया था या उसका पालन नहीं किया गया था। यह कहने के लिए पर्याप्त है कि प्रक्रिया भूमि अधिग्रहण अधिनियम, **1894** के समान है (इसके बाद '**1894** अधिनियम' के रूप में संदर्भित) अर्थात, भूमि के अधिग्रहण के लिए अधिनियम की धारा **4** के तहत आवश्यक अधिसूचना, इच्छुक व्यक्तियों को अधिनियम की धारा **5** के तहत दावा

दायर करने का अवसर और अधिनियम की धारा **7** के तहत मुआवजे की राशि का निर्धारण। याचिका में कहा गया था कि अधिग्रहण की कोई सूचना कभी प्रकाशित नहीं की गई थी और न ही इसके लिए किसी प्रक्रिया का पालन किया गया था।

5. प्रत्यर्थि संख्या 2 ने **परिसीमा द्वारा वर्जन** के मुकदमे में बचाव करने की मांग की। उनका कहना है कि कृषि विभाग ने 1980 में भूमि अधिग्रहण करते समय उचित प्रक्रिया का पालन किया था और भूमि राजस्व विभाग के माध्यम से स्वर्गीय मान बहादुर बासनेट को रु. 62,645 का मुआवजा दिया था। इस प्रकार वे इसके परिणामस्वरूप विषय वस्तु की संपत्ति के शांतिपूर्ण कब्जे का आनंद ले रहे थे। दिवंगत अपीलार्थी का यह दावा कि सरकार को किराया दिया जा रहा था, कृषि विभाग की जानकारी में नहीं था।

6. विचारण न्यायालय ने दिनांक 31.10.2006 के निर्णय और आदेश द्वारा वाद को परिसीमा और मूल गुणागुण दोनों के आधार पर खारिज कर दिया। गुण-दोष पर विचार इस तथ्य पर आधारित था कि मुआवजे के भुगतान की मूल मुहर लगी प्राप्तियों को कार्यवाही के रिकॉर्ड में नोट किया गया था, हालांकि वास्तविक रसीद उपलब्ध नहीं थी। अंतर-विभागीय रूप से भी आदान-प्रदान किए गए पत्राचार में मुआवजे के भुगतान की ओर इशारा किया गया था, साथ ही एक पत्र जो स्वर्गीय मान बहादुर बासनेट द्वारा भेजा गया था, जिसमें उचित मुआवजे के भुगतान पर वाद संपत्ति के हस्तांतरण के लिए उनकी सहमति का संकेत दिया गया था।

7. सिक्किम उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दायर और पंजीकृत होने पर, नियमित प्रथम अपील संख्या **2/2007** होने पर, दोनों मुद्दों पर इसकी जांच की गई और **29.05.2008** को खारिज कर दिया गया। हालांकि, जहां तक परिसीमा के पहलू का संबंध था, उच्च न्यायालय ने परिसीमा अधिनियम, **1963** के अनुच्छेद **65** पर भरोसा करके निचली अदालत के निष्कर्षों से असहमति जताई, जिसमें प्रतिकूल कब्जे के मामले में बारह **(12)** वर्ष की अवधि का प्रावधान किया गया था। प्रतिकूल कब्ज़े के इस तरह के मामले को राज्य सरकार के लिए दलील देना मुश्किल माना गया था और किसी भी मामले में, तथ्यों पर, कभी भी दलील नहीं दी गई थी। यह भी दर्ज किया गया है कि उक्त अधिनियम के तहत कोई अधिसूचना प्रस्तुत नहीं की गई थी, और न ही उस ओर से कोई रिकॉर्ड प्रस्तुत किया गया था। वास्तविक हस्ताक्षरित और मुहर लगी प्राप्तियों को भी अभिलेख पर नहीं रखा गया था। सरकार के असंगत रुख का भी उल्लेख किया गया, जिसमें दावा किया गया था कि उन्होंने भूमि का अधिग्रहण किया था, जबकि अभी भी इसके लिए भूमि राजस्व एकत्र कर रहे थे। इन पहलुओं को स्वर्गीय मान बहादुर बासनेट के दिनांक **20.3.1980** के पत्र के साथ संतुलित करने की मांग की गई थी, जिसने मुआवजे का भुगतान किए जाने पर अधिग्रहण पर अपनी कोई आपत्ति नहीं दी थी, और भूमि राजस्व विभाग के दिनांक **02.04.1980** के पत्र में दिवंगत मान बहादुर बासनेट को भुगतान के लिए जिला कलेक्टर को मुआवजा भेजा गया था। इन दस्तावेजों के सामने भूमि राजस्व अभिलेखों का इतना महत्व नहीं बताया गया था, लेकिन अपीलार्थी की दुर्दशा के साथ सहानुभूति रखते हुए और पूरे विवाद में सरकार की कमजोर स्थिति को स्वीकार करते हुए, यह देखा गया कि सरकार के पास अपीलार्थी से एकत्र किए गए भूमि राजस्व को बनाए रखने का कोई औचित्य नहीं था। चूंकि उस ओर से कोई दावा नहीं किया गया था, इसलिए यह निर्देश दिया गया था कि यदि अपीलार्थी द्वारा

ऐसा कहा जाता है तो उसे वापस कर दिया जाना चाहिए, क्योंकि सरकार को एक "आदर्श वादी" के रूप में कार्य करना होगा।

8. विवादित आदेश के खिलाफ दायर "विशेष अनुमति याचिका में 07.01.2011 अनुमति को दी गई थी। हालांकि, इस मामले को पहली बार 02.05.2019 को सुनवाई के लिए लिया गया था। पक्षकारों के विद्वान वकील को सुनने पर, प्रत्यर्थीयो के विद्वान वकील के अनुरोध पर, रिकॉर्ड की जांच करने और न्यायालय को यह दिखाने के लिए समय दिया गया कि कैसे रु. **62,645** को कलेक्टर द्वारा नकद में वापस लिया गया था **(**जैसा कि आरोप लगाया गया था और जैसा कि तर्क दिया गया था**)** और किस दस्तावेज **(**दस्तावेजों**)** ने स्वर्गीय मान बहादुर बासनेट को भुगतान का प्रमाण दिया था।यह देखा गया कि यह कम से कम अपेक्षित था क्योंकि प्रत्यर्थीयो ने अधिग्रहण कार्यवाही के सभी रिकॉर्ड खोने का दावा किया था और कोई भी अधिसूचना उपलब्ध नहीं थी। आदेश यह कहते हुए समाप्त हुआ कि इसे दिखाने में विफलता के लिए राज्य सरकार को नई अधिसूचना के माध्यम से भूमि का अधिग्रहण करने की आवश्यकता होगी, यदि वह भूमि रखना चाहती है।

9. अगस्त, 2019 में एक हलफनामा दायर किया गया था, जिसका 27.8.2019 को विश्लेषण किया गया था, और यह पाया गया कि न तो कलेक्टर के खाते से रु. 62,645 की नकदी निकालने का कोई सबूत था, न ही स्वर्गीय मान बहादुर बासनेट से भुगतान को स्वीकार करने वाली कोई रसीद, रसीद के लिए बताए गए कवर लेटर को छोड़कर। इन तथ्यों के संदर्भ में, पारस्परिक रूप से सहमत समाधान पर काम करने के लिए, विवाद को सिक्किम के उच्च न्यायालय से जुड़े मध्यस्थता केंद्र को भेजा गया था। दुर्भाग्य से इसका भी कोई परिणाम नहीं निकला, एक विफलता रिपोर्ट प्राप्त हुई और इस प्रकार, शेष तर्कों को सुना गया।

10. हम देख सकते हैं कि हालांकि अनुमति दी गई थी, लेकिन प्रत्यर्थीयो द्वारा परिसीमा के निष्कर्ष सहित किसी भी पहलू पर कोई प्रत्याक्षेप दायर नहीं किया गया था।

11. जो भी हो, तथ्य यह है, जैसा कि उच्च न्यायालय ने देखा है, कि यह प्रत्यर्थीयो का मामला नहीं है कि उनके पास प्रतिकूल कब्जा था, बल्कि यह कि उन्होंने उचित प्रक्रिया के माध्यम से भूमि का अधिग्रहण किया था और इसके लिए मुआवजे का भुगतान किया था। हम उच्च न्यायालय से सहमत हैं कि प्रतिवादी द्वारा प्रतिकूल कब्जे की भी कोई याचिका नहीं है। हमें इस अपील में उसी द्वारा हिरासत में नहीं रखा जाना है।

12. हम इस दृष्टिकोण से पूरी तरह सहमत हैं और इस कारण से भी प्रतिकूल अधिकार का अनुरोध वास्तव में नहीं टिकता है।

13. यह हमें इस सवाल पर लाता है कि क्या अधिग्रहण की प्रक्रिया का कानून के अनुसार पालन किया गया था। हमें धारा **4** के तहत भूमि अधिग्रहण करने के इरादे या उसके बाद किसी अन्य घोषणा के बारे में कोई अधिसूचना नहीं दिखाई गई है। वास्तव में हमारे समक्ष और नीचे की अदालतों के समक्ष जो दावा किया गया है,

वह यह है कि अधिग्रहण प्रक्रिया के संबंध में कोई रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं है। यह स्पष्ट रूप से प्रत्यर्थी राज्य को एक कठिन स्थिति में डालता है, जिसे केवल अधिग्रहण के लिए प्राप्त सहमति और मुआवजे के भुगतान पर भरोसा करके समाप्त करने की मांग की गई थी, जैसा कि निर्धारित किया गया था। मुआवजे के पहलू पर, केवल एक आवरण पत्र उपलब्ध है, न कि वास्तविक रसीद। हमने ऊपर यह भी देखा है कि नकद में भुगतान करने की एक असामान्य प्रक्रिया को अपनाने का दावा किया जाता है, और यदि हम अधिग्रहण के वर्ष को देखें तो यह राशि कोई मामूली राशि नहीं है। हमने अधिकारियों को यह दिखाने का एक और अवसर भी दिया कि किस खाते से कलेक्टर द्वारा यह मुआवजा पैसे निकाला गया था, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि राशि निकालने का भी कोई सबूत नहीं है, मुआवजे का भुगतान बहुत कम है। स्वर्गीय मान बहादुर बासनेट का दिनांक **20.3.1980** का पत्र निस्संदेह भूमि अधिग्रहण के लिए अनापत्ति है, लेकिन बशर्ते कि मुआवजे का भुगतान बाद में किया गया था।यह पत्र उक्त अधिनियम के तहत भूमि अधिग्रहण या मुआवजे के निर्धारण के लिए प्रक्रिया का प्रमाण प्रस्तुत करने की आवश्यकता को स्पष्ट नहीं करता है। उक्त अधिनियम की धारा **3(1), 4(2), 5(1)** और **7 (2)** के तहत परिकल्पित उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना अधिग्रहण का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। यह साबित करने का भार राज्य पर था कि उक्त अधिनियम के तहत परिकल्पित प्रक्रिया का पालन किया गया और मुआवजे का भुगतान किया गया। इनमें से किसी भी पहलू के समर्थन में कोई साक्ष्य नहीं दिया गया है, सिवाय स्वर्गीय मान बहादुर बासनेट की मुआवजे के भुगतान पर भूमि अधिग्रहण की अनुमति देने की इच्छा, भूमि राजस्व विभाग द्वारा एक चेक के माध्यम से जिला कलेक्टर को राशि का अग्रेषण, और उसके बाद कलेक्टर/प्रत्यर्थी संख्या **1** से एक पत्र जिसमें कहा गया है कि कुछ रसीद संलग्न की जा रही थी, जिसमें नकद में भुगतान को स्वीकार किया गया था **(**बिना रसीद मिले)। इस प्रकार, प्राथमिक और द्वितीयक साक्ष्य दोनों का अभाव है।

14. हम यह नोट कर सकते हैं कि भले ही भूमि में अधिकार अब एक मौलिक अधिकार नहीं है, फिर भी यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 300 क के तहत एक संवैधानिक अधिकार बना हुआ है, और किसी भी व्यक्ति को संपत्ति के अधिकारों से वंचित करने की मांग करने वाले किसी भी अधिनियम के प्रावधानों का सख्ती से पालन[1] किया जाना चाहिए।

15. यह भी कानूनन तय किया गया है कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894[2] की धारा 4(1) की प्रक्रिया का पालन करना **(**उक्त अधिनियम की धारा 5(1) के समान**)** अनिवार्य है और जब तक कि वह सूचना उसमें निहित प्रावधानों के अनुसार नहीं दी जाती है, तब तक पूरी अधिग्रहण कार्यवाही दूषित हो जाएगी। इस तरह के गैर-अनुपालन के आधार पर परिसर में प्रवेश के परिणामस्वरूप प्रवेश गैरकानूनी[3] होगा। कानून का चरित्र अनुचित होने के कारण इसका सख्ती से पालन किया जाना आवश्यक है। नोटिस का उद्देश्य भूमि अधिग्रहण के इरादे के बारे में इच्छुक व्यक्तियों को सूचित करना है। इस प्रकार, जैसा कि वे पढ़ते हैं, उक्त अधिनियम के इन प्रावधानों का भी पालन किया जाना आवश्यक है।

16. हम ***विद्या देवी***[4] में कानून के विकसित होने और उक्त उद्देश्य के लिए तर्क के बारे में एक विस्तृत चर्चा पाते हैं, जिसके प्रासंगिक पैराग्राफ नीचे पढ़े गए हैं

"10.1. अपीलार्थी को 1967 में उसकी संपत्ति को जबरन जब्त कर लिया गया था, जब संपत्ति का अधिकार संविधान के भाग III में अनुच्छेद 31 द्वारा गारंटीकृत एक मौलिक अधिकार था।

अनुच्छेद 31 निजी संपत्ति के अधिकार की गारंटी देता है (पश्चिम बंगाल राज्य बनाम सुबोध गोपाल बोस और अन्य। ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 92) जिसे विधि की उचित प्रक्रिया और न्यायसंगत और निष्पक्ष मुआवजे के बिना वंचित नहीं किया जा सकता था।

10.2. संविधान (चालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा संपत्ति का अधिकार एक मौलिक अधिकार नहीं रह गया, हालांकि, यह एक मानव अधिकार बना रहा (*तुकाराम काना जोशी और अन्य बनाम एम.आई.डी.सी. एवं अन्य.* (2013) 1 *एस. सी. सी. 353)* एक कल्याणकारी राज्य में, और संविधान के अनुच्छेद 300क के तहत एक संवैधानिक अधिकार। अनुच्छेद 300क में प्रावधान है कि किसी भी व्यक्ति को कानून के अधिकार के अलावा उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा। कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अलावा राज्य किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से बेदखल नहीं कर सकता है। क्षतिपूर्ति का भुगतान करने का दायित्व, हालांकि अनुच्छेद **300** क में स्पष्ट रूप से शामिल नहीं है, उस अनुच्छेद में अनुमान लगाया जा सकता है (*केटी प्लांटेशन प्राइवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य* ***(2011) 9*** *एससीसी* ***1)***।

कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना किसी व्यक्ति को उसकी निजी संपत्ति से जबरन बेदखल करना मानव अधिकार के साथ-साथ संविधान के अनुच्छेद 300-क के तहत संवैधानिक अधिकार का भी उल्लंघन होगा।

भरोसा हिंदुस्तान *पेट्रोलियम कॉरपोरेशन लिमिटेड बनाम डेरियस शापुर चेन्नई* (*2005) 7 एससीसी 627* के फैसले पर रखा गया है, जिसमें इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया हैः

> "6. ...संविधान के अनुच्छेद 300-क में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, राज्य अपनी "प्रतिष्ठित अधिकार क्षेत्र" की शक्ति का प्रयोग करते हुए किसी व्यक्ति के संपत्ति के अधिकार में हस्तक्षेप कर सकता है, लेकिन यह सार्वजनिक उद्देश्य के लिए होना चाहिए और इसके लिए उचित मुआवजा दिया जाना चाहिए।
>
> (जोर मूल रूप से दिया गया)

एन. पद्मम्मा बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी (2008) 15 एससीसी 517, में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया किः

> "21. यदि संपत्ति का अधिकार एक मानव अधिकार है और एक संवैधानिक अधिकार भी है, तो इसे कानून के अनुसार के अलावा नहीं लिया जा सकता है। संविधान का अनुच्छेद **300-**क इस अधिकार की रक्षा करता है।भारत के संविधान के अनुच्छेद **300-**ए के प्रावधानों को ध्यान

में रखते हुए इस तरह के अधिकार को वापस लेने की मांग करने वाले अधिनियम के प्रावधानों का सख्ती से अर्थ लगाया जाना चाहिए।

(जोर मूल रूप से दिया गया)

दिल्ली एयरटेक सर्विसेज प्रा. लिमिटेड एवं अन्य बनाम यूपी राज्य और अन्य **(***2011) 9 एससीसी 354*, में इस न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में संपत्ति के अधिकार को एक बुनियादी मानव अधिकार के रूप में मान्यता दीः

"30. प्रत्येक न्यायशास्त्र और विभिन्न राजनीतिक विचारकों द्वारा यह स्वीकार किया जाता है कि कुछ मात्रा में संपत्ति का अधिकार सरकार के अत्याचार और आर्थिक उत्पीड़न के खिलाफ एक अनिवार्य सुरक्षा है। जेफरसन का विचार था कि संपत्ति के समर्थन के बिना स्वतंत्रता लंबे समय तक नहीं रह सकती है। जॉन एडम्स की राय थी, "संपत्ति को सुरक्षित किया जाना चाहिए, अन्यथा स्वतंत्रता नहीं रह सकती।" वास्तव में यह विचार कि संपत्ति ही बीज है, यदि अन्य संवैधानिक मूल्यों को फलना-फूलना है तो इसका संरक्षण किया जाना चाहिए, राजनीतिक विचारकों और न्यायविदों के बीच आम सहमति है।

(जोर मूल रूप से दिया गया**)**

जिलुभाई नानभाई खाचर बनाम गुजरात राज्य, (1995) सप. 1 एस.सी.सी. 596 में इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

"48. ... दूसरे शब्दों में, अनुच्छेद 300-क केवल राज्य की शक्तियों को सीमित करता है कि किसी भी व्यक्ति को कानून के अधिकार के अलावा उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा। कानून की मंजूरी के बिना कोई अभाव नहीं होना चाहिए। अनुच्छेद **300-**क के तहत किसी अन्य तरीके से वंचित करना अधिग्रहण या कब्जा लेना नहीं है। दूसरे शब्दों में, यदि कोई कानून नहीं है, तो कोई अभाव नहीं है।

(जोर मूल रूप से दिया गया**)**

10.3. इस मामले में, अपीलार्थी को किसी भी कानूनी मंजूरी के बिना, और कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना, और उसे न्यायसंगत मुआवजे के भुगतान से वंचित किए बिना, उसकी संपत्ति से जबरन बेदखल नहीं किया जा सकता था, जो 1967 में जबरन बेदखल की तारीख पर एक मौलिक अधिकार था।

10.4. राज्य का यह तर्क कि अपीलार्थी या उसके पूर्ववर्तियों ने अधिग्रहण के लिए "मौखिक रूप से" सहमति दी थी, पूरी तरह से निराधार है। हम राज्य द्वारा अपीलार्थी को उसकी संपत्ति के अनिवार्य रूप से विनिवेश में अधिकार और कानूनी मंजूरी का पूर्ण अभाव पाते हैं।

10.5. कानून के शासन द्वारा शासित लोकतांत्रिक राजनीति में, राज्य कानून की मंजूरी के बिना किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से वंचित नहीं कर सकता था। *तुकाराम काना जोशी एवं अन्य बनाम एम.आई.डी.सी. एवं अन्य* ***(2013) 1 एस. सी. सी. 353*** पर भरोसा रखा गया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि राज्य को अधिग्रहण, अध्यपेक्षा या किसी अन्य अनुज्ञेय वैधानिक पद्धति की प्रक्रिया का अनुपालन करना चाहिए। कानून के शासन द्वारा शासित एक कल्याणकारी राज्य होने के नाते राज्य अपने लिए संविधान द्वारा प्रदान की गई स्थिति से परे का दर्जा नहीं ले सकता है।

हरियाणा राज्य बनाम मुकेश कुमार में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि संपत्ति के अधिकार को अब न केवल एक संवैधानिक या वैधानिक अधिकार माना जाता है, बल्कि एक मानव अधिकार भी माना जाता है। आश्रय, आजीविका, स्वास्थ्य, रोजगार आदि जैसे व्यक्तिगत अधिकारों के क्षेत्र में मानवाधिकारों पर विचार किया गया है। मानवाधिकारों ने एक बहुआयामी आयाम प्राप्त किया है।

17. निर्णय में विलंब और विलंब के पहलू पर भी चर्चा की गई है, जो इस प्रकार हैः

"10.7. न्यायालय को स्थानांतरित करने में अपीलार्थी की देरी और अड़चनों की स्थिति द्वारा प्रस्तुत तर्क भी अस्वीकार किए जाने योग्य है। कार्रवाई के निरंतर कारण के मामले में देरी और अड़चनों को नहीं उठाया जा सकता है, या यदि परिस्थितियाँ न्यायालय की न्यायिक अंतरात्मा को झटका देती हैं। विलम्ब को क्षमा करना न्यायिक विवेकाधिकार का विषय है, जिसका प्रयोग किसी मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में विवेकपूर्ण और यथोचित रूप से किया जाना चाहिए। यह मौलिक अधिकारों के उल्लंघन और दावा किए गए उपचार और कब और कैसे देरी हुई, इस पर निर्भर करेगा। पर्याप्त न्याय करने के लिए अपने संवैधानिक अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए न्यायालयों के लिए निर्धारित सीमा की कोई अवधि नहीं है।

एक मामले में जहां न्याय की मांग इतनी सम्मोहक है, एक संवैधानिक न्यायालय न्याय को बढ़ावा देने के लिए अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करेगा, न कि इसे हराने के लिए ***(****पी.एस. सदाशिवस्वामी बनाम राज्य टी.एन. (1975) 1 एससीसी 152)*

तुकाराम काना जोशी और अन्य बनाम एम.आई.डी.सी. और अन्य ***(****2013) 1 एस. सी. सी. 353*, में इस न्यायालय ने एक समान तथ्य स्थिति पर विचार करते हुए निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित कियाः

"ऐसे अधिकारी हैं जो कहते हैं कि देरी और अड़चनें दावा करने के अधिकार को समाप्त कर देती हैं। इनमें से अधिकांश प्राधिकरण सेवा न्यायशास्त्र, दशकों पहले उनके साथ की गई गलती के लिए मुआवजे का अनुदान, वैधानिक बकाया की वसूली, शैक्षिक सुविधाओं के लिए दावा और इसी तरह के मामलों की अन्य श्रेणियों आदि से संबंधित हैं। हालांकि, यह सच है कि कुछ प्राधिकरण हैं जो इस देरी को निर्धारित करते हैं और एक नागरिक को उपचार की मांग करने से रोकते हैं, भले ही संविधान के अनुच्छेद **32** या **226** के तहत उसके मौलिक अधिकार का उल्लंघन किया गया हो, मामला पूरी तरह से एक अलग परिदृश्य से संबंधित है। राज्य के कार्यकर्त्ताओं ने बिना किसी कानून की मंजूरी के अपीलार्थियों की भूमि पर कब्जा कर लिया। अपीलार्थियों ने बार-बार मुआवजे का लाभ देने के लिए कहा था। राज्य को या तो अधिग्रहण, या अधिग्रहण, या किसी अन्य अनुमेय वैधानिक तरीके के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना चाहिए।

(जोर मूल रूप से दिया गया**)**

18. उपरोक्त कानूनी सिद्धांत प्रतिवादियों को मामले के दिए गए तथ्यों में कोई बचाव नहीं छोड़ते हैं।

19. उपर्युक्त का परिणाम यह होगा कि प्रतिवादी यह स्थापित करने में विफल रहे हैं कि उन्होंने कानून के अनुसार भूमि का अधिग्रहण किया था और उचित मुआवजे का भुगतान किया था। इस प्रकार, अपीलार्थी भूमि के कब्जे का हकदार होगा और साथ ही प्रत्यर्थीयो द्वारा उसके अवैध उपयोग और कब्जे के लिए कम से कम तीन (3) वर्ष की अवधि के लिए, नोटिस दिए जाने से पहले के लिए नुकसान का भी हकदार होगा। हम *एल. ए. ओ. बनाम एम. रामकृष्ण रेड्डी*[5], में इस न्यायालय के निर्णय के कारण अपनी टिप्पणियों में मजबूत हैं, जहां यह अभिनिर्धारित किया गया था कि स्वामी भूमि के गलत उपयोग और कब्जे के लिए हर्जाने का हकदार हो सकता है, जिसके संबंध में भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 के तहत कोई अधिसूचना जारी नहीं की गई है, कब्जे की तारीख से ऐसी अधिसूचना अंतिम रूप से प्रकाशित होने की तारीख तक।

20. हम इस बात से अवगत हैं कि भूमि का उपयोग प्रत्यर्थी-राज्य द्वारा प्रत्यर्थी संख्या. 2 विभाग के माध्यम से किया जा रहा है। हालाँकि, यह राज्य सरकार को ऐसा लाइसेंस नहीं देता है। हमने मामले को मध्यस्थता के लिए भेजने का प्रयास किया था, ताकि एक सौहार्दपूर्ण समाधान निकाला जा सके, लेकिन यह सफल नहीं हुआ। तथापि, हम प्रत्यर्थी-राज्य को इस निर्णय के परिणामों का विश्लेषण करने के लिए कुछ समय देना चाहते हैं, और यदि वे ऐसा चाहते हैं, तो उक्त अधिनियम के तहत एक उचित अधिसूचना के माध्यम से भूमि का अधिग्रहण करने के लिए, और कानून में उचित उपाय करने के लिए ताकि वे भूमि रखने में सक्षम हो सकें। हम प्रत्यर्थी-राज्य को निर्णय की तारीख से तीन (3) महीने का समय देते हैं ताकि वे अपना मन बना सकें कि वे क्या करना चाहते हैं। क्या वे अभी भी एक उचित अधिसूचना जारी करके भूमि को बनाए रखना चाहेंगे, या वे

भूमि का कब्जा सौंपना चाहेंगे। किसी भी स्थिति में, उपयोग और व्यवसाय के लिए भुगतान का सवाल अभी भी उत्पन्न होगा, जिसे कानून के अनुसार निर्धारित करना होगा। प्रत्येक लाभ का निर्धारण न्यायालय आयुक्त द्वारा किया जाएगा, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा नियुक्त किया जाएगा, क्योंकि उस ओर से वाद में ही राहत मांगी गई है।

21. उपर्युक्त आदेश को ध्यान में रखते हुए, दावे के मामले में भूमि राजस्व को वापस करने के लिए अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित वैकल्पिक निर्देश उत्पन्न नहीं होगा।

22. तदनुसार अपील की अनुमति प्रदान की जाती है, पक्षकारों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ दें।

अंकित ज्ञान अपील की अनुमति है।

1. एन. पद्मम्मा एवं अन्य बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी और अन्य (2008) 15 एससीसी 517
2. प्रारंभिक अधिसूचना का प्रकाशन और उसके बाद अधिकारियों की शक्तियां
3. नरिंदरजीत सिंह और रणजीत सिंह और अन्य उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य आदि (1973) 1 एससीसी 157
4. (विद्या देवी बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य, सी.ए. की संख्या 60-61/2020 निर्णय दिनांक 08.01.2020 को भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तय की गई)
5. (2011) 11 एससीसी 648

दिव्या कुमारी की देखरेख में, अधिवक्ता सरवजीत सिंह द्वारा अनुवादित।